National Journal of Multidisciplinary Research and Development
ISSN: 2455-9040; Impact Factor: RJIF 5.22
www.nationaljournals.com
Volume 2; Issue 2; May 2017; Page No. 183-184

लोकतंत्र में मात्रात्मक एवं गुणात्मक परिवर्तन तथा जन सहभागिता

जितेन्द्र कुमार

शोध छात्र, राजनीति विज्ञान विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश, भारत।

प्रस्तावना

लोकतन्त्र एक ऐसा शासनतन्त्र है जो एक जन को दूसरे जन से जोड़ता है। प्रत्येक जन मिलकर एक तन्त्र अथवा शासन प्रणाली का निर्माण करता है, जो लोकतन्त्र/जनतन्त्र नाम से अभिहित होता है। लिंकन की यह परिभाषा कि 'लोकतन्त्र जनता का, जनता के लिए, जनता के द्वारा शासन है।' इसे परिभाषित करने का सफलतम् प्रयास है। लोकतन्त्र की कोई परिभाषा सर्वमान्य नही हो पायी है। अरस्तू के वर्गीकरण से वर्तमान विश्व तक लोकतन्त्र के प्रारूप में अनेक बदलाव आए हैं। आज यह विश्व का सर्वाधिक सफल एवं विस्तृत शासन तन्त्र है। अधिकांश देश लोकतन्त्र को अपना चुके हैं अथवा अपनाने की ओर अग्रसर हैं। लोकप्रिय सम्प्रभुता, राजनीतिक समानता, लोक सहमति और बहुमत के शासन से परिपूर्ण व्यवस्था को लोकतंत्र के रूप में परिभाषित किया जा सकता है[1] राजनीतिशास्त्री लैरी डॉयमण्ड (Larry Diamond)[2] के अनुसार लोकतन्त्र में चार प्रमुख तत्व पाए जाते हैं–

1. एक ऐसी राजनीतिक व्यवस्था जिसमें सरकार को चुनने एवं हटाने हेतु स्वतन्त्र एवं निष्पक्ष चुनाव की व्यवस्था हो,
2. राजनीति एवं नागरिक जीवन में लोगों की सक्रिय भागीदारी
3. नागरिकों के मानवाधिकारों की रक्षा
4. कानून का शासन

लोकतन्त्र सकारात्मक शासन प्रणाली है। यह आशा की जाती है कि किसी भी व्यक्ति के साथ जाति, नस्ल, भाषा, धर्म, लिंग, पूजा पद्धतियों के आधार पर भेदभाव नहीं किया जाएगा। इस तन्त्र में मतदान का अधिकार, स्वतन्त्र न्यायिक तन्त्र, स्वतन्त्र एवं निष्पक्ष मीडिया, धार्मिक स्वतन्त्रता, अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता का अधिकार जैसी मूलभूत विशेषताओं से युक्त पर्यावरण उपलब्ध होना अनिवार्य शर्त है। लोकतन्त्र मात्र एक शासन प्रणाली नहीं है अपितु यह एक ऐसी व्यवस्था है जिसके माध्यम से प्रत्येक व्यक्ति अपनी क्षमता का विकास कर स्व उन्नयन कर सके। एक लोकतन्त्र में कोई भी व्यक्ति स्वयं को राजा अथवा सम्राट नहीं बना सकता बल्कि लोगों के द्वारा चुना गया व्यक्ति प्रशासन करता है एवं शान्ति एवं सामंजस्य बनाए रखता है।[3]

लोकतान्त्रिक व्यवस्था को मुख्यतः दो प्रकारों में विभक्त किया जाता है ———— प्रयत्क्ष लोकतन्त्र (Direct Democracy) एवं अप्रत्यक्ष लोकतन्त्र (Indirect Democracy)। प्रत्यक्ष लोकतन्त्र में जनता आपसी सहमति से नीति का निर्माण करती है एवं उसका क्रियान्वयन भी करती है। अर्द्ध –प्रत्यक्ष लोकतन्त्र (Semi Direct Democracy) भी इसी का आंशिक रूप है जिसमें जनता दिन–प्रतिदिन के कार्य हेतु प्रतिनिधि को प्रशासक के रूप में चुनती है किन्तु स्वयं सम्प्रभु बनी रहती है। इस हेतु वह तीन प्रकार की तकनीक का प्रयोग करती है–

1. जनमत संग्रह (Referendum)
2. आरम्भण (Initiative), और
3. वापस बुलाना (Recall)।

प्रथम दो 'जनमत संग्रह' एवं 'आरम्भण' प्रत्यक्ष विधायन के उदाहरण है।[4] स्विटजरलैण्ड इस प्रकार का सर्वोतम उदाहरण है। अप्रत्यक्ष लोकतन्त्र जिसे सामान्यतया प्रतिनिधि लोकतन्त्र कहा जाता है, लोकतन्त्र का ऐसा प्रकार है जिसमें जनता अपने प्रतिनिधियों के माध्यम से शासन करती है। प्रतिनिधि लोकतन्त्र वर्तमान समय में लगभग सभी लोकतान्त्रिक देशों में व्यवहृत है। सं0 राज्य अमेरिका, ब्रिटेन और भारत प्रमुख प्रतिनिधि लोकतन्त्रात्मक देश है।

20वीं शाताब्दी परिवर्तन का काल रहा है। इस कालावधि में लोकतान्त्रिक व्यवस्था मजबूत होकर उभरी एवं अन्य शासन तन्त्र, जिसे साम्यवादी, मार्क्सवादी अथवा माओवादी तन्त्र के नाम से जाना जाता था; धीरे–धीरे 21वीं शती तक स्मरण पत्र बनती गई हैं। जिन किसी देशों में संरचनाएं मजबूत हुई है वहाँ सैनिक तन्त्र एवं तानाशाही तन्त्र जैसी व्यवस्था कमजोर होती गई है। ट्युनीशिया, म्यांमार, नेपाल, मिस्र आदि तात्कालिक उदाहरण के तौर पर ग्रहीत किए जा सकते हैं। वर्तमान शती में आशा की जा सकती है कि आने वाला विश्व लोकतान्त्रिक विश्व होगा।

स्वतन्त्र भारत के जन ने 15 अगस्त 1947 को नया अध्याय प्रारम्भ किया। अनेकानेक अपेक्षाओं एवं स्वप्नों के साथ हम भारत के लोगों ने प्रतिनिधिक संसदीय लोकतन्त्र को अपनाया, जिसे भारत की आगामी पीढ़ी का नूतन निर्माण करना था। ब्रिटिश लोकतान्त्रिक व्यवस्था पर आधारित, भारतीय संविधान का निर्माण; सम्प्रभुता सम्पन्न, समाजवादी, पंथनिरपेक्ष[5] और लोकतन्त्रात्मक गणराज्य जैसे आधारभूत तत्वों पर किया गया। लोकतन्त्र, पारदर्शिता एवं बहुलवाद के सिद्धान्त पर आधारित भारतीय संविधान समानता न्याय और बन्धुत्व का संयोग स्थापित करते हुए अन्य संविधानों हेतु आदर्श पथ–प्रदर्शक बना।

प्रतिनिधिक लोकतन्त्र में वयस्क मताधिकार का सिद्धान्त प्रमुख उपकरण होता है। जनता अपने अधिकारों को त्यागकर एक लोकप्रिय संस्था का चुनाव करती है। लोग, स्वयं के द्वारा चुने गए प्रतिनिधियों को शासन एवं सरकार चलाने का अधिकार समर्पित कर देते हैं, जब तक कि वे स्वयं सक्रिय रूप से प्रत्येक राजनीतिक गतिविधि में भाग न लें। इस बात को सदैव ध्यान में रखा जाना चाहिए कि लोकतन्त्र और चुनाव पर्यायवाची अवधारणा नही हैं। चुनाव प्रतिनिधियों के चुनाव का माध्यम है जबकि लोकतन्त्र, जन और शासन के मध्य की समस्त अन्तर्क्रिया को अपने में समाहित करता है।

चुनाव एवं चुनाव व्यवहार एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके माध्यम से जनता शासन में अपनी सहमति अथवा असहमति व्यक्त करती है। चुनाव प्रक्रिया की क्षमता यह निर्धारित करती है कि चुने गए प्रतिनिधि नैतिक रूप से जन के प्रति जिम्मेदार हैं अथवा नहीं। चुनाव देश की राजनीतिक व्यवस्था की क्षमता को भी निर्देशित करता है।[6]

भारतीय संविधान हमारी लोकतान्त्रिक प्रक्रिया के सशक्तीकरण हेतु प्रस्तावना सहित मौलिक अधिकार एवं नीति निदेशक तत्व जैसे अभिकरण प्रस्तावित करता है। जिसमें समाज के अन्तिम व्यक्ति तक जन के तन्त्र की पहुँच स्थापित हो। वर्तमान में जन–प्रतिनिधियों द्वारा विभिन्न प्रकार के विषयों में दोहरा चरित्र अपनाया जा रहा है जिससे लोकतन्त्र के ये महत्वपूर्ण उपकरण

अपनी प्रासंगिकता खोते जा रहे हैं। कानून के शासन का वातावरण लालच, धूर्तता, भ्रष्टाचार, भाई–भतीजावाद, शाक्ति का दुरूपयोग जैसी विनाशकारी प्रवृत्ति से दूषित होता जा रहा है।[7]

इतिहास इस तथ्य का साक्षी रहा है कि जब कभी भी बाहरी ताकतों ने राष्ट्रीय सरकार को कमजोर पाया है, हमें बाह्य आक्रमण और आन्तरिक अशान्ति का सामना करना पड़ा है। देश में अनेक समस्याएं विकराल रूप लेती जा रही हैं फिर भी हमारे राजनितिज्ञों को चुनावी राजनीति और सत्ता प्राप्ति के अतिरिक्त कुछ भी नहीं सूझता। चुनाव के दौरान मतदाताओं को भयभीत करना, मतदान स्थलों पर कब्जा करना, चारित्रिक हनन, प्रत्याशियों की हत्या इत्यादि और धनबल का बढ़ता प्रयोग हमें यह सोंचने पर विवश कर देता है कि हमारी लोकतान्त्रिक व्यवस्था कमजोर होने के साथ ही मृतप्राय होती जा रही है। राजनीति में जनता मात्र मतदाता बनकर रह गयी है जिसे विभिन्न हितों की बलि चढ़ा दिया जाता है। सत्ता प्राप्ति, जनप्रतिनिधियों का एकमात्र लक्ष्य है। सामान्यतया हम हिंसायुक्त–राजनीतिक वातावरण में रहने हेतु अनुकूलित होते जा रहे हैं।

राजनीतिज्ञों द्वारा जनित अराजक स्थिति हमें यह विश्वास करने हेतु बाध्य कर रही है कि लोकतान्त्रिक व्यवस्था में सत्ता प्राप्त करने वाला व्यक्ति अथवा संस्था, बिना संघर्ष के सत्ता छोड़ने के लिए तैयार नहीं है[8] इस प्रकार की परिस्थिति में जनप्रतिनिधियों को स्वतन्त्र छोड़ देना, उन्हें उत्तरदायित्व से मुक्त कर देना; गैर निर्देशित करना होगा, जो लोकतन्त्र के स्वास्थ्य हेतु अनुपयुक्त होगा। लोकतन्त्र में कतिपय सीमाएं हैं जिनको ध्यान में रखा जाना आवश्यक है। 1980 के दशक में आपातकाल ने लोकतान्त्रिक मूल्यों को नष्ट कर दिया। इसके बावजूद भारतीय लोकतान्त्रिक प्रक्रिया मजबूती से आगे बढ़ी है।

यदि देखा जाय तो हम ऐसे भारतीय लोकतन्त्र में रह रहे हैं जिसकी आशा इसके निर्माताओं ने नहीं की थी। हम नित नए दिन अराजक और विनाशकारी व्यवस्था की ओर बढ़ रहे हैं। हमने लोककल्याणकारी राज्य की स्थापना का सपना देखा था किसी व्यक्ति अथवा संस्था के राज्य का नहीं, हम जातिरहित समाज चाहते थे किन्तु ऐसा समाज नहीं जिसमें जाति ही विभाजन का औजार बन जाय, हमने एक अखण्ड भारत की कल्पना की थी किन्तु ऐसे भारत की नहीं जिसमें राज्य आपस में ही झगड़ें, हम ऐसा लोकतन्त्र चाहते थे जिसमें 'कानून के शासन' की सर्वोच्चता हो किन्तु ऐसा लोकतन्त्र नही चाहते थे जिसमें शासकों द्वारा इसे हड़प लिया जाय।

हमारे राजनीतिक व्यवस्था में घटित हो रही इस प्रकार की अलोकतान्त्रिक गतिविधियों ने, लोकतान्त्रिक प्रक्रिया में हमारे विश्वास को विचलित किया है। उदाहरण के तौर पर जब एक सामान्य नागरिक यह कहता है कि वर्तमान राजनीतिक व्यवस्था, जो कि न ही लोकतान्त्रिक और न ही कल्याणकारी; से बेहतर ब्रिटिश उपनिवेशवादी व्यवस्था थी, तो हमें इस पर खुले मस्तिष्क से विचार करना चाहिए।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. रेने ,ऑस्टिन गवर्निंग : ब्रीफ इंट्रोडक्शन टूपोलिटिकल साइंस, ड्राईदेंन पब्लिकेशन प्रेस, हिन्स्दले एलिओसिस, 1975,पृष्ठ–22
2. डायमंड एल एंड मर्लिनो एल, द क्वालिटी ऑफ डेमोक्रेसी (2016), इन सर्च ऑफ डेमोक्रेसी ,लन्दन रूरुथलेज, ISBN 978–0–415–78128
3. प्रधानमंत्री,श्री नरसिम्हा राव ,राष्ट्र के नाम संबोधन, 15 August, 1991,द टाइम्स ऑफ इंडिया ,अगस्त 16,1991
4. स्मिथ ग्राहम (2009), डेमोक्रेटिक इनोवेशनरूडिजाइनिंग इंस्टीट्यूटशंस फॉर सिटीजन पार्टिसिपेशन, कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, पृष्ठ –112
5. समाजवादी और पंथनिरपेक्षता शब्द भारतीय संविधान की प्रस्तावना में 42वे संविधान संशोधन अधिनियम ,1976 के द्वारा जोड़े गये द्य
6. कृष्णा कान्त, गवर्नर ऑफ आँध्रप्रदेश, क्न्सेंसुअल नेशनलिज्म –एन अप्रोच पेपर, मेन स्ट्रीम, (एनुअल 1992)
7. राम एन, इज करप्शन अ वे ऑफ लाइफ, फ्रंटलाइन, जुलाई 18,1993,पृष्ठ–32
8. लास्की हेराल्ड, ग्रामर ऑफ पॉलिटिक्स, एस चन्द–कंपनी लिमिटेड, नयी दिल्ली, पृष्ठ –162